

भाषा के कारागार से आजाद (नामवर सिंह की आलोचना)

*डॉ० अखिल मिश्र

*सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

इमेल-akhilmishra777@gmail.com, मो. 9718550437

Received: February 28, 2026

Accepted: March 30, 2026

शोध सार

नामवर सिंह ने बहस, वाद-विवाद-संवाद जैसी सभी शैलियों को आलोचना के क्षेत्र में न केवल स्थापित किया बल्कि आलोचना क्षेत्र का स्वरूप भी वृहत्तर किया। उनकी आलोचना में स्पष्टवादिता, तीक्ष्णता, महत्वपूर्ण स्थापनाएँ, विश्व साहित्य की झलकियाँ, भारतीय चिंतन दिखाई देता है। उनके अपने पूर्व के आलोचकों के अनेक गुण-धर्म समाहित हैं। हम यदि नामवर सिंह की आलोचकीय-भाषा पर विचार करते हुए नामवर सिंह के ही उद्धरण को खोजे तो वह एक आलेख में मिल जायेगा जो कभी उनकी पुस्तक 'वाद-विवाद-संवाद' के 'आलोचना की भाषा' नामक अध्याय में उल्लेखित है। इस लेख के माध्यम से नामवर सिंह ने 'घोर विचार शैथिल्य और बुद्धि का आलस्य फैलने का खतरा' की ओर इशारा किया है।

बीज शब्द : आलोचना, मार्क्सवादी-चिंतन, कलावादी आलोचना, दूसरी परंपरा, औपनिवेशिक विचारधारा

नामवर सिंह आलोचना विधा के महत्वपूर्ण व्यक्तित्व हैं। उसका कारण यह है कि उन्होंने आलोचना को बहस के केन्द्र में लाए। बहस, वाद-विवाद-संवाद जैसी सभी शैलियों को आलोचना के क्षेत्र में न केवल स्थापित किया बल्कि उन्होंने आलोचना क्षेत्र का स्वरूप भी वृहत्तर किया। उनकी आलोचना में स्पष्टवादिता, तीक्ष्णता, महत्वपूर्ण स्थापनाएँ, विश्व साहित्य की झलकियाँ, भारतीय चिंतन दिखाई देता है। उनके अपने पूर्व के आलोचकों के अनेक गुण-धर्म समाहित हैं। जैसे रामचन्द्र शुक्ल जैसी सूत्रात्मक शैली, महावीर प्रसाद जैसी शब्दों की बारीकी, हजारी

प्रसाद द्विवेदी जैसा विषयों का गहरा अन्वेषण। हम जब भी उनकी आलोचना पर विचार करते हैं तो उनकी भाषा सहज ही आकर्षित करती है। निराला ने गद्य की भाषा को जीवन-संग्राम की भाषा कहा है जो नामवर सिंह की आलोचनात्मक भाषा में देखा जाता है। नामवर सिंह की भाषा उनकी सबसे बड़ी शक्ति है। उनका चिंतन मार्क्सवादी है। भाषा एकदम साफ, सुथरी, नई चमकती हुई। इसके उदाहरण उनकी आलोचना में मौजूद हैं। जब वे मुक्तिबोध के पक्ष में खड़े होकर कविता के मैदान में उतरते हैं या नई कहानियों के मूल्यांकन के क्रम में निर्मल वर्मा के पक्ष में आते हैं या हजारीप्रसाद द्विवेदी को लेकर 'दूसरी परंपरा की खोज' की वकालत करते हैं। उनकी भाषा हमेशा उनका साथ देती है।

नामवर सिंह की आलोचना अनेक दृष्टियों से ध्यान आकर्षित करती है। उनकी आलोचना की भाषा के दो मूलभूत स्रोत हैं-पहला लोकजीवन, दूसरा-अपनी समृद्ध परंपरा। मार्क्सवादी विचार उनकी ऊर्जा एवं विचार प्रणाली का स्रोत है। उनके लोकजीवन में अद्भुत अनुभव हैं। इसका प्रमाण 'दूसरी परंपरा की खोज' नामक पुस्तक में मिलता है। इस पुस्तक की भूमिका में वे लिखते हैं- "वे आकाशधर्मी गुरु थे, हर पौधे को बढ़ने के लिए उन्मुक्तता देने के विश्वासी। यह उन्मुक्तता ही उनकी परंपरा का मूल स्वर है। लेकिन यह उन्मुक्तता जितनी सहज दिखती है उसे समझ पाना उतना सहज नहीं है। अपनी ओर से इसे समझाने में उन्होंने कोई कसर नहीं छोड़ी। पर 'समुझो नहीं तसि बालापन तब भति रहे अचेत।' "यह बात तबकी है जब वे शांतिनिकेतन से काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी के आचार्य होकर आए और एम.ए. अंतिम वर्ष के छात्र के रूप में मुझे उनके चरणों में बैठकर कुछ सीखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरा 'सूकर खेत' काशी ही था। अभिधा में भी।" ¹¹

नामवर सिंह एक तरफ तो अपने आकाशधर्मी गुरु हजारीप्रसाद द्विवेदी के लिए लोकवादी तुलसीदास की पंक्तियों का सहारा लेते हैं तो दूसरी तरफ लोकोक्ति के ही सहारे वे काशी नगर जैसी मोक्षदायिनी नगर के लिए 'सूकर क्षेत्र' जैसी पदावली का इस्तेमाल करते हैं। ज्ञान का यह केन्द्र नामवर की दृष्टि में सूकर क्षेत्र हो गया है। उनकी आलोचना की जीवनी शक्ति है लोक एवं उसकी भाषा। इनकी आलोचना आरी चलाता वह बढ़ई है जो गांव में रहकर अपने औजार से एक शिल्प गढ़ता है जिस शिल्प में गहरी रचनात्मकता रहती है। उनकी आलोचना का क्षेत्र इतना व्यापक है कि वे लोक के शब्द इतिहास के किसी भी काल से उठा लेते हैं। यह यकीन रूप से कहा जा सकता है कि नामवर सिंह की आलोचना गद्य की भाषा में लोक के अनुभव समाहित करके एक नया प्रयोग किया है। जिसके चिह्न दूसरी परंपरा की खोज में कई जगह दिखते हैं जैसे "तीस वर्ष बाद काशी ने फिर फेंका। इस बार बैर मिला पश्चिमोत्तर दिशा में। शिव के त्रिशूल से गिरे तो शिव के अलिक-शिवालिक पर। चंडीगढ़। क्या फर्क पड़ता है? अपनी काशी छूटी तो चाहे जो शहर हो।" ² काशी छूटने के दुख के बारे में वे बताते हुए जिस भाषा का इस्तेमाल करते हैं वे लोक-अनुभव का अनुपम उदाहरण है- "वे 'द्विज' और 'होठ' जो उल्लू की नखों के चोट से बुरी तरह घायल हो जाने पर भी अपने पुरो व पुष्ट वायु को छोड़ते हिचकते नहीं। वहाँ तो वह राजहंस है

स्वर्णगंगा के विसलतालेश से सर्वर्द्धित हुए हैं और गंगा के जल को भी कलुषित पाकर त्याग सकते हैं।”³ इस उदाहरण के लिए ‘उल्लू’ एवं ‘राजहंस’ दो विरोधी प्रतीकों का इस्तेमाल किया गया है इससे नामवर सिंह की अपनी लोकशक्ति की भाषा का पता चलता है।

मार्क्सवादी आलोचना के पूरे कलेवर में लोकजीवन की भाषा मिलना दुर्लभ है। नामवर सिंह में यह मौजूद है जहाँ संपूर्ण मार्क्सवादी आलोचना में मार्क्स, लेनिन, काडवेल, लुकाच के उद्धरण पर्याप्त मात्रा में मौजूद रहते हैं। पश्चिम की शब्दावलियाँ मौजूद रहती हैं। नामवर सिंह इस दृष्टि से महत्वपूर्ण आलोचक हैं जो भारतीय लोकजीवन से, लोक अनुभवों से निकले शब्दों का इस्तेमाल करते हैं।

नामवर सिंह की आलोचना में सूत्रात्मक शैली भरपूर है जो रामचंद्र शुक्ल एवं हजारीप्रसाद द्विवेदी की परंपरा से निकलती है। जैसे शुक्ल जी कविता की आलोचना करने के लिए कविता में प्रवेश करते हैं और उसे सामाजिक उपादेयता की कसौटी पर कसते हैं। कविता की आलोचना करते वक्त नामवर जी शुक्ल जी की ही राह पर हैं वे शुक्ल जी की ही तरह छोटे-छोटे वाक्यों के साथ धारदार एवं गंभीर प्रयोग करते हैं। प्रतिबद्ध आलोचक ही अपनी बात निर्भीकता से रख सकता है। इस दृष्टि से नामवर सिंह का ‘छायावाद’ अत्यंत महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय है। ‘छायावाद’ में वे कहते हैं- “बुद्धि विवेक को वार देने वाले तथा हृदयवाद का प्रचार करने वाले अंत में समाज से भागकर इसी तरह एकांतवास करते हैं और दूसरों को भी काम-धंधा छोड़कर अपने यहाँ आने का उपदेश देते हैं। इसी तरह वे संसार में समानता व प्रेम का राज्य प्रतिष्ठित करने का सपना देखते हैं। इसी चिंतन प्रक्रिया की तर्कसंगत परिणति अबुद्धिवाद है।”⁴ यह उदाहरण ही नामवर सिंह की आलोचना में दो टूक भाषा का उदाहरण है। हिंदी के सृजनशील आलोचक, आलोचना को रचना केन्द्रित मानता है जबकि मार्क्सवादी आलोचना रचना के बाहर एवं भीतर से गुजरकर सामाजिक कर्म को कसौटी पर परखने वाली एक प्रक्रिया है। विजयदेवनारायण साही ने आलोचक के गुण धर्म की विशेषता पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि आलोचक को सबसे पहले निर्भय और साहसी होना चाहिए। इस दृष्टि से नामवर सिंह की भाषा एवं दृष्टिकोण दोनों सर्वोत्तम है। जनता के साहित्य के संदर्भ में अज्ञेय की यह टिप्पणी बड़ी मौजू थी जब उन्होंने यह कहा था कि जनता साहित्य में व्यापकता होती है लेकिन गहराई नहीं होती है। नामवर सिंह ने इसका जवाब दिया, ‘देखना यह है कि किसी लेखक में व्यापकता के होते हुए भी जब हम गहराई की कमी पाते हैं तो वस्तुतः वह गहराई की कमी व्यापकता की ही कमी तो नहीं है। इसी तरह यदि कोई लेखक संकीर्ण होते हुए भी गहरा मालूम हो तो विचार की जरूरत है कहीं हमारी उस गहराई में ही तो कमी नहीं है। अनुभूति की गहराई की परीक्षा करते हुए हम इसकी व्याप्ति में जा पड़ेंगे। किसी को गहराई तक प्रभावित करने का अर्थ है, उसके संपूर्ण व्यक्तित्व, अस्तित्व और भावसत्ता को प्रभावित करना और बहुत देर तक प्रभावित किए रहना। अनुभूति की गहराई का निर्णय एक व्यक्ति और एक क्षण से नहीं किया जा सकता। गहराई का निर्णय दिक् और काल-सापेक्ष है।” अपनी बात प्रमाणित करने के

लिए फिर उसी लोक भाषा का इस्तेमाल करते हैं-“ताल के सूखने से उसकी व्यापकता के साथ गहराई भी कम होती है।”⁵

इस तरह का लेखन वही कर सकता है जो आलोचना के क्षेत्र में अंगद के पाँव की तरह खड़ा हो। कलावादी ताकतों का साहित्य में उभार सन् 1980 के बाद शुरू हुआ जिसका सामना नामवर सिंह ने किया। दो दूक भाषा का इसमें महत्वपूर्ण योगदान था। नामवर सिंह के समानान्तर विजयदेवनारायण साही आलोचक थे जिसमें वही आलोचकीय निर्भीकता दिखाई देती है।

नामवर सिंह की आलोचना ‘संवादी’ आलोचना है। ज्ञानोदय में ‘नई कविता पर क्षण भर’ में नामवर बनाम साही की बहस, नजीर और वाद-विवाद एवं संवाद का अनुपम प्रसंग दिखाई देता है। नामवर सिंह की आलोचना इसलिए संवाद करनी है क्योंकि उनकी आलोचना में लोकभाषा के शब्द समाहित हैं। भाषा की सर्जनात्मक खोज की प्रक्रिया में नामवर सिंह की आलोचना बहुत महत्वपूर्ण है। भाषा में जैसी संवादधर्मिता है उसका उदाहरण ‘कविता के नये प्रतिमान’ में मिल जाएगा, “अपनी समझ में डॉ० नगेन्द्र ने एक द्वैत को एकदम नकार कर केवल कविता-अकविता भेदक एक प्रश्न को ही सार्थक माना किन्तु वे अपनी तर्क-प्रक्रिया में उस द्वैत से नहीं बच पाए। यदि नए प्रकार का भेद निरर्थक है तो बिहारी और पंत या घनानंद और गिरिजाकुमार माथुर के भेद करने की आवश्यकता ही क्या?”⁶ नामवर सिंह की उपरोक्त टिप्पणी डॉ० नगेन्द्र के नई कविता के ‘रस-सिद्धान्त’ में आग्रह के संदर्भ में कही थी।

नामवर सिंह के संवाद शैली का दूसरा उदाहरण है। जिसे देखकर/पढ़कर यह नहीं समझा जा सकता कि नामवर जी प्रायः एक नुकीले व्यंग्य का प्रयोग करते रहे हैं लेकिन इस व्यंग्य में कहीं भी व्यक्तिगत आक्षेप नहीं मिलेगा जैसे कभी भगवतशरण उपाध्याय ने ‘नदी के द्वीप’ और ‘शेखर एक जीवनी’ का मूल्यांकन करते हुए अज्ञेय पर किया था, “स्वायत्तता में नए पुजारियों ने तो ऐसा कोई परदा भी नहीं रखा जो आलोचना को विचारधारा का उपनिवेश कहने की जुर्रत करता है। वह अपनी भाषा एक राजनीतिक विचारधारा से उधार लेता है और उस भाषा के साथ ही स्वयं की विचारधारा का उपनिवेश बन जाता है। फिर कैसे यकीन हो कि ऐसे लोग आलोचना को स्वायत्त बनाएँगे।”⁷

नामवर सिंह की आलोचना में प्रयुक्त शब्द सीधे-सादे और सरल लगते हैं। लेकिन वे शब्द जिस तरह अपने व्यंग्य की तीखी मार से भीतर तक बेध जाएंगे यह साहित्य का सहभोक्ता ही जानता है। जैसे खूब पतले बेहया के डंडे की मार कोई अपने हाथों पर ले रहा हो।

नामवर सिंह की आलोचना में प्रयुक्त शब्द उर्दू, फारसी, अंग्रेजी के ऐसे शब्द रहते हैं जो आमजन के रोजमर्रा से जुड़े रहते हैं। उनकी कोशिश रहती है कि आलोचना का कठिन अवधारणा भी आम साहित्यिक पाठक भी समझ

सके। वे गालिब, फैज़, कबीर, जायसी, देव, पद्माकर, भरतमुनि, मम्मट से और पीछे वैदिक ऋचाओं को भी उद्धृत करते हैं।

हम यदि नामवर सिंह की आलोचकीय-भाषा पर विचार करते हुए नामवर सिंह के ही उद्धरण को खोजे तो वह एक आलेख में मिल जायेगा जो कभी उनकी पुस्तक 'वाद-विवाद-संवाद' के 'आलोचना की भाषा' नामक अध्याय में उल्लेखित है। इस लेख के माध्यम से नामवर सिंह ने 'घोर विचार शैथिल्य और बुद्धि का आलस्य फैलने का खतरा' की ओर इशारा किया है। नामवर सिंह और रामचन्द्र शुक्ल दोनों ने 'समालोचना का हवाई होना विचारशीलता का हास' है। नामवर जी कहते हैं- "रिचर्ड्स को अंग्रेजी ने जिस वाग्जाल का सामना इस शताब्दी के दूसरे दशक में करना पड़ा, हिन्दी में शुक्ल जी को यह स्थिति तीसरे दशक में मिली और हमें यदि वही बात आज भी दुहराने की जरूरत महसूस होती है तो बहुत कुछ इसलिए कि अपने यहाँ आलोचना के क्षेत्र में भाषा के स्तर पर दृढ़ता के साथ उस संघर्ष को आगे नहीं बढ़ाया गया। आलोचना के दायित्व और आलोचना के प्रतिमान की बातें तो बहुत हुई किन्तु जिस भाषा के माध्यम से वह दायित्व संपन्न होता है उसकी चर्चा बहुत कम हुई है।"⁸

आलोचक अपनी भाषा का निर्माण स्वयं कहते हैं। लेकिन नामवर सिंह आलोचना की भाषा को लेकर चिंतित भी हैं। वे कहते हैं "आलोचना की भाषा पत्रकारिता की भाषा हो गई है। पत्रकार आज आलोचक हो गए हैं। आलोचना की भाषा फिकरों, मुहावरों और आंतरिक सूचनाओं की उत्तेजना से दूषित हो गई है।"⁹

नामवर सिंह की आलोचना की भाषा इस रूप में समकालीन आलोचना की भाषा के सामने चुनौती और निर्माता दोनों है।¹⁰

संदर्भ:

- 1सिंह नामवर, दूसरी परंपरा की खोज (भूमिका से)
- 2सिंह नामवर, दूसरी परंपरा की खोज (पृष्ठ संख्या 34, 35)
- 3सिंह नामवर, दूसरी परंपरा की खोज (पृष्ठ संख्या 42)
- 4सिंह नामवर, छायावाद (पृष्ठ संख्या 144)
- 5सिंह नामवर, इतिहास और आलोचना (पृष्ठ संख्या 13, 22)
- 6सिंह नामवर, कविता के नये प्रतिमान (पृष्ठ संख्या 28)
- 7सिंह नामवर, वाद-विवाद-संवाद (पृष्ठ संख्या 36-37)
- 8सिंह नामवर, वाद-विवाद-संवाद (पृष्ठ संख्या 19)
- 9सिंह नामवर, वाद-विवाद-संवाद (पृष्ठ संख्या 30)

